3 पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

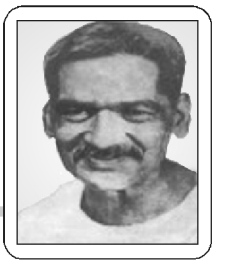

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म–**27 मई, 1894 ई0।
- **जन्म-स्थान–**खैरागढ़ (जबलपुर)।
- **पिता–**पुन्नालाल बख्शी
- **मृत्यु–**27 दिसम्बर, 1971 ई0।
- **भाषा–**खड़ीबोली।
- **सम्पादन–**'सरस्वती' एवं 'छाया' पत्रिका।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का जन्म 27 मई, 1894 ई0 में जबलपुर के खैरागढ़ नामक स्थान में हुआ था। इनके पिता पुन्नालाल बख्शी तथा बाबा उमराव बख्शी साहित्य-प्रेमी और कवि थे। इनकी माता को भी साहित्य से प्रेम था। परिवार के साहित्यिक वातावरण के प्रभाव के कारण ये विद्यार्थी जीवन से ही कविताएँ रचते थे। बी0 ए0 पास करते ही इन्होंने 'सरस्वती' में अपनी रचनाएँ प्रकाशित कराना प्रारम्भ किया। बाद में 'सरस्वती' के अतिरिक्त अन्य पत्र-पत्रिकाओं में भी इनकी रचनाएँ प्रकाशित होने लगीं। इनकी कविताएँ स्वच्छन्दतावादी थीं, जिन पर अंग्रेजी कवि वर्ड्सवर्थ का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। बख्शीजी की प्रसिद्धि का मुख्य आधार आलोचना और निबन्ध-लेखन है। साहित्य का यह महान् साधक 27 दिसम्बर, 1971 ई0 में परलोकवासी हो गया।

बख्शीजी की गणना द्विवेदी-युग के प्रमुख साहित्यकारों में होती है। बख्शीजी विशेष रूप से अपने ललित निबन्धों के लिए स्मरण किये जाते हैं। ये एक विशेष शैलीकार के रूप में भी प्रसिद्ध हैं। इन्होंने जीवन, समाज, धर्म, संस्कृति और साहित्य आदि विषयों में उच्चकोटि के निबन्ध लिखे हैं। यत्र-तत्र शिष्ट हास्य-व्यंग्य के कारण इनके निबन्ध रोचक बन पड़े हैं। बख्शीजी ने 1920 ई0 से 1927 ई0 तक बड़ी कुशलता से 'सरस्वती' का सम्पादन किया। कुछ वर्षों तक इन्होंने 'छाया' मासिक पत्रिका का भी सम्पादन बड़ी योग्यता से किया। इन्होंने स्वतन्त्रतावादी काव्य एवं समीक्षात्मक कृतियों का सृजन किया। निबन्धों, आलोचनाओं, कहानियों, कविताओं और अनुवादों में इनके गहन अध्ययन और व्यापक दृष्टिकोण की स्पष्ट छाप है। इन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा 1949 में साहित्य वाचस्पति की उपाधि से अलंकृत किया गया।

बख्शीजी की कृतियों का विवरण इस प्रकार है—

(i) निबन्ध-संग्रह–'प्रबन्ध पारिजात', 'पंचपात्र', 'पद्मवन', 'मकरन्द बिन्दु', 'कुछ बिखरे पन्ने', 'मेरा देश' आदि।

(ii) कहानी-संग्रह–'झलमला', 'अञ्जलि'।

(iii) आलोचना–'विश्व साहित्य', 'हिन्दी साहित्य विमर्श', 'साहित्य शिक्षा', 'हिन्दी उपन्यास साहित्य', 'हिन्दी कहानी साहित्य', विश्व साहित्य, प्रदीप (प्राचीन तथा अर्वाचीन कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन), समस्या, समस्या और समाधान, पंचपात्र, पंचरात्र, नवरात्र, यदि मैं लिखता।

(iv) नाटक–अन्नपूर्णा का अनुवाद (मौरिस मैटरलिंक के नाटक 'सिस्टर बीट्रिस' का अनुवाद) 'उन्मुक्ति का बंधन' (मौरिस मैटरलिंक के नाटक 'दी यूजलेस डेलिवरेन्स' का अनुवाद)।

(v) काव्य-संग्रह—'शतदल', 'अश्रुदल', 'पंचपात्र'।

(vi) उपन्यास—कथाचक्र, भोला (बाल उपन्यास), वे दिन (बाल उपन्यास)।

(vii) आत्मकथा-संस्मरण—मेरी अपनी कथा, जिन्हें नहीं भूलूँगा, अंतिम अध्याय।

(viii) साहित्य समग्र—बख्शी ग्रन्थावली (आठ खण्डों में)।

बख्शीजी की भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ीबोली है। भाषा में संस्कृत शब्दावली का अधिक प्रयोग है। उर्दू तथा अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। उनकी भाषा में विशेष प्रकार की स्वच्छन्द गति के दर्शन होते हैं। इनकी शैली गम्भीर, प्रभावोत्पादक, स्वाभाविक और स्पष्ट है। अपने लेखन में समीक्षात्मक, भावात्मक, विवेचनात्मक, व्यंग्यात्मक शैली को इन्होंने अपनाया है।

'क्या लिखूँ?' एक ललित निबन्ध है, जिसके विषय-प्रतिपादन, प्रस्तुतीकरण एवं भाषा-शैली में बख्शीजी की सभी विशेषताएँ सन्निविष्ट हैं। इस निबन्ध की उत्कृष्टता के दर्शन उस समन्वित रचना-कौशल में होते हैं, जिसके अन्तर्गत लेखक ने दो विषयों पर निबन्ध की विषय-सामग्री प्रस्तुत करने आदि का संकेत ही नहीं दिया है, वरन् संक्षिप्त रूप में उन्हें प्रस्तुत भी कर दिया है। इस निबन्ध को पढ़कर निबन्ध के सम्बन्ध में जॉनसन की उक्ति का स्मरण हो आता है— 'निबन्ध मन का आकस्मिक और उच्छृंखल आवेग है—असंबद्ध और चिन्तनहीन बुद्धिविलासमात्र।' इसमें बख्शीजी ने बताया है कि अच्छे निबन्ध के लिए लेखक को ठीक विषय का चुनाव करना चाहिए।

●●

क्या लिखूँ?

मुझे आज लिखना ही पड़ेगा। अंग्रेजी के प्रसिद्ध निबन्ध लेखक ए० जी० गार्डिनर का कथन है कि लिखने की एक विशेष मानसिक स्थिति होती है। उस समय मन में कुछ ऐसी उमंग-सी उठती है, हृदय में कुछ ऐसी स्फूर्ति-सी आती है, मस्तिष्क में कुछ ऐसा आवेग-सा उत्पन्न होता है कि लेख लिखना ही पड़ता है। उस समय विषय की चिन्ता नहीं रहती। कोई भी विषय हो, उसमें हम अपने हृदय के आवेग को भर ही देते हैं। हैट टाँगने के लिए कोई भी खूँटी काम दे सकती है। उसी तरह अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिए कोई भी विषय उपयुक्त है। असली वस्तु है हैट, खूँटी नहीं। इसी तरह मन के भाव ही तो यथार्थ वस्तु हैं, विषय नहीं।

गार्डिनर साहब के इस कथन की यथार्थता में मुझे सन्देह नहीं, पर मेरे लिए कठिनता यह है कि मैंने उस मानसिक स्थिति का अनुभव ही नहीं किया है, जिसमें भाव अपने-आप उत्थित हो जाते हैं। मुझे तो सोचना पड़ता है, चिन्ता करनी पड़ती है, परिश्रम करना पड़ता है, तब कहीं मैं एक निबन्ध लिख सकता हूँ। आज तो मुझे विशेष परिश्रम करना पड़ेगा, क्योंकि मुझे कोई साधारण निबन्ध नहीं लिखना है। आज मुझे नमिता और अमिता के लिए आदर्श निबन्ध लिखना होगा। नमिता का आदेश है कि मैं 'दूर के ढोल सुहावने होते हैं' इस विषय पर लिखूँ। अमिता का आग्रह है कि मैं 'समाज सुधार' पर लिखूँ, ये दोनों ही विषय परीक्षा में आ चुके हैं और उन दोनों पर आदर्श निबन्ध लिखकर मुझे उन दोनों को निबन्ध-रचना का रहस्य समझाना पड़ेगा।

दूर के ढोल सुहावने अवश्य होते हैं पर क्या वे इतने सुहावने होते हैं कि उन पर पाँच पेज लिखे जा सकें? इसी प्रकार समाज-सुधार की चर्चा अनादि काल से लेकर आज तक होती आ रही है और जिसके सम्बन्ध में बड़े-बड़े विज्ञों में भी विरोध है, उसको मैं पाँच पेज में कैसे लिख दूँ? मैंने सोचा कि सबसे पहले निबन्धशास्त्र के आचार्यों की सम्मति जान लूँ। पहले यह तो समझ लूँ कि आदर्श निबन्ध है क्या और वह कैसे लिखा जाता है; तब फिर मैं भविष्य की चिन्ता करूँगा। इसलिए मैंने निबन्धशास्त्र के कई आचार्यों की रचनाएँ देखीं।

एक विद्वान् का कथन है कि निबन्ध छोटा होना चाहिए। छोटा निबन्ध बड़े की अपेक्षा अधिक अच्छा होता है, क्योंकि बड़े निबन्ध में रचना की सुन्दरता नहीं बनी रह सकती। इस कथन को मान लेने में ही मेरा लाभ है। मुझे छोटा ही निबन्ध लिखना है, बड़ा नहीं। पर लिखूँ कैसे? निबन्धशास्त्र के उन्हीं आचार्य महोदय का कथन है कि निबन्ध के दो प्रधान अंग हैं—सामग्री और शैली। पहले तो मुझे सामग्री एकत्र करनी होगी, विचार-समूह संचित करना होगा। इसके लिए मुझे मनन करना चाहिए। यह तो सच है कि जिसने जिस विषय का अच्छा अध्ययन किया है, उसके मस्तिष्क में उस विषय के विचार आते हैं। पर यह कौन जानता था कि 'दूर के ढोल सुहावने' पर भी निबन्ध लिखने की आवश्यकता होगी। यदि यह बात पहले ज्ञात होती तो पुस्तकालय में जाकर इस विषय का अनुसंधान कर लेता; पर अब समय नहीं। मुझे तो यहीं बैठकर दो घण्टों में दो निबन्ध तैयार कर देने होंगे। यहाँ न तो विश्वकोश है और न कोई ऐसा ग्रन्थ, जिनमें इन विषयों की सामग्री उपलब्ध हो सके। अब तो मुझे अपने ही ज्ञान पर विश्वास कर लिखना होगा।

विज्ञों का कथन है कि निबन्ध लिखने के पहले उसकी रूपरेखा बना लेनी चाहिए। अतएव सबसे पहले मुझे 'दूर के ढोल सुहावने' की रूपरेखा बनानी है। मैं सोच ही नहीं सकता कि इस विषय की कैसी रूपरेखा है। निबन्ध लिख लेने के बाद मैं उसका सारांश कुछ ही वाक्यों में भले ही लिख दूँ, पर निबन्ध लिखने के पहले उसका सार दस-पाँच शब्दों में कैसे लिखा जाय? क्या सचमुच हिन्दी के सब विज्ञ लेखक पहले से अपने-अपने निबन्धों के लिए रूपरेखा तैयार कर लेते हैं? ए० जी० गार्डिनर को तो अपने लेखों का शीर्षक बनाने में ही सबसे अधिक कठिनाई होती है। उन्होंने लिखा है कि मैं लेख लिखता हूँ और शीर्षक देने का भार मैं अपने मित्र पर छोड़ देता हूँ। उन्होंने यह भी लिखा है कि शेक्सपीयर को भी नाटक लिखने में उतनी कठिनाई न हुई होगी, जितनी कठिनाई नाटकों के नामकरण में हुई होगी। तभी तो घबराकर नाम न रख सकने के कारण उन्होंने अपने एक नाटक का नाम रखा 'जैसा तुम चाहो'। इसलिए मुझसे तो यह रूपरेखा तैयार न होगी।

अब मुझे शैली निश्चित करनी है। आचार्य महोदय का कथन है कि भाषा में प्रवाह होना चाहिए। इसके लिए वाक्य

छोटे-छोटे हों, पर एक-दूसरे से सम्बद्ध हों। यह तो बिल्कुल ठीक है। मैं छोटे-छोटे वाक्य अच्छी तरह लिख सकता हूँ। पर मैं हूँ मास्टर। कहीं नमिता और अमिता यह न समझ बैठें कि मैं यह निबन्ध बहुत मोटी अक्ल वालों के लिए लिख रहा हूँ। अपनी विद्वत्ता का प्रदर्शन करने के लिए, अपना गौरव स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि वाक्य कम-से-कम आधे पृष्ठ में तो समाप्त हों। बाणभट्ट ने कादम्बरी में ऐसे ही वाक्य लिखे हैं। वाक्यों में कुछ अस्पष्टता भी चाहिए; क्योंकि यह अस्पष्टता या दुर्बोधता गाम्भीर्य ला देती है। इसलिए संस्कृत के प्रसिद्ध कवि श्रीहर्ष ने जान-बूझकर अपने काव्य में ऐसी गुत्थियाँ डाल दी हैं, जो अज्ञों से न सुलझ सकें और सेनापति ने भी अपनी कविता मूढ़ों के लिए दुर्बोध कर दी है। तभी तो अलंकारों, मुहावरों और लोकोक्तियों का समावेश भी निबन्धों के लिए आवश्यक बताया जाता है। तब क्या किया जाय?

अंग्रेजी के निबन्धकारों ने एक दूसरी पद्धति को अपनाया है। उनके निबन्ध इन आचार्यों की कसौटी पर भले ही खरे सिद्ध न हों, पर अंग्रेजी साहित्य में उनका मान अवश्य है। उस पद्धति के जन्मदाता मानटेन समझे जाते हैं। उन्होंने स्वयं जो कुछ देखा, सुना और अनुभव किया, उसी को अपने निबन्धों में लिपिबद्ध कर दिया। ऐसे निबन्धों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे मन की स्वच्छन्द रचनाएँ हैं। उनमें न कवि की उदात्त कल्पना रहती है, न आख्यायिका-लेखक की सूक्ष्म दृष्टि और न विज्ञों की गम्भीर तर्कपूर्ण विवेचना। उनमें लेखक की सच्ची अनुभूति रहती है। उनमें उसके सच्चे भावों की सच्ची अभिव्यक्ति होती है, उनमें उसका उल्लास रहता है। ये निबन्ध तो उस मानसिक स्थिति में लिखे जाते हैं, जिसमें न ज्ञान की गरिमा रहती है और न कल्पना की महिमा, जिसमें हम संसार को अपनी ही दृष्टि से देखते हैं और अपने ही भाव से ग्रहण करते हैं। तब इसी पद्धति का अनुसरण कर मैं भी क्यों न निबन्ध लिखूँ। पर मुझे तो दो निबन्ध लिखने होंगे।

मुझे अमीर खुसरो की एक कहानी याद आयी। एक बार प्यास लगने पर वे एक कुएँ के पास पहुँचे। वहाँ चार औरतें पानी भर रही थीं। पानी माँगने पर पहले उनमें से एक ने खीर पर कविता सुनने की इच्छा प्रकट की, दूसरी ने चर्खे पर, तीसरी ने कुत्ते पर और चौथी ने ढोल पर। अमीर खुसरो प्रतिभावान थे, उन्होंने एक ही पद्य में चारों की इच्छाओं की पूर्ति कर दी। उन्होंने कहा—

खीर पकायी जतन से, चर्खा दिया चला।
आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजा॥

मुझमें खुसरो की प्रतिभा नहीं है, पर उनकी इस पद्धति को स्वीकार करने से मेरी कठिनाई आधी रह जाती है। मैं भी एक निबन्ध में इन दोनों विषयों का समावेश कर दूँगा। एक ही ढेले से दो चिड़ियाँ मार लूँगा।

दूर के ढोल सुहावने होते हैं; क्योंकि उनकी कर्कशता दूर तक नहीं पहुँचती। जब ढोल के पास बैठे हुए लोगों के कान के पर्दे फटते रहते हैं, तब दूर किसी नदी के तट पर सन्ध्या समय, किसी दूसरे के कान में वही शब्द मधुरता का संचार कर देते हैं। ढोल के उन्हीं शब्दों को सुनकर वह अपने हृदय में किसी के विवाहोत्सव का चित्र अंकित कर लेता है। कोलाहल से पूर्ण घर के एक कोने में बैठी हुई किसी लज्जाशीला नव-वधू की कल्पना वह अपने मन में कर लेता है। उस नव-वधू के प्रेम, उल्लास, संकोच, आशंका और विषाद से युक्त हृदय के कम्पन ढोल की कर्कश ध्वनि को मधुर बना देते हैं; क्योंकि उसके साथ आनन्द का कलरव, उत्सव व प्रमोद और प्रेम का संगीत ये तीनों मिले रहते हैं। तभी उसकी कर्कशता समीपस्थ लोगों को भी कटु नहीं प्रतीत होती और दूरस्थ लोगों के लिए तो वह अत्यन्त मधुर बन जाती है।

जो तरुण संसार के जीवन-संग्राम से दूर हैं, उन्हें संसार का चित्र बड़ा ही मनमोहक प्रतीत होता है, जो वृद्ध हो गये हैं, जो अपनी बाल्यावस्था और तरुणावस्था से दूर हट आये हैं, उन्हें अपने अतीतकाल की स्मृति बड़ी सुखद लगती है। वे अतीत का ही स्वप्न देखते हैं। तरुणों के लिए जैसे भविष्य उज्ज्वल होता है, वैसे ही वृद्धों के लिए अतीत। वर्तमान से दोनों को असन्तोष होता है। तरुण भविष्य को वर्तमान में लाना चाहते हैं और वृद्ध अतीत को खींचकर वर्तमान में देखना चाहते हैं। तरुण क्रान्ति के समर्थक होते हैं और वृद्ध अतीत गौरव के संरक्षक। इन्हीं दोनों के कारण वर्तमान सदैव क्षुब्ध रहता है और इसी से वर्तमान काल सदैव सुधारों का काल बना रहता है।

मनुष्य जाति के इतिहास में कोई ऐसा काल ही नहीं हुआ, जब सुधारों की आवश्यकता न हुई हो। तभी तो आज तक कितने ही सुधारक हो गये हैं, पर सुधारों का अन्त कब हुआ? भारत के इतिहास में बुद्धदेव, महावीर स्वामी, नागार्जुन, शंकराचार्य, कबीर, नानक, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द और महात्मा गाँधी में ही सुधारकों की गणना समाप्त नहीं होती। सुधारकों का दल नगर-नगर और गाँव-गाँव में होता है। यह सच है कि जीवन में नये-नये क्षेत्र उत्पन्न होते जाते हैं और नये-नये सुधार

हो जाते हैं। न दोषों का अन्त है और न सुधारों का। जो कभी सुधार थे, वही आज दोष हो गये हैं और उन सुधारों का फिर नव सुधार किया जाता है। तभी तो यह जीवन प्रगतिशील माना गया है।

हिन्दी में प्रगतिशील साहित्य का निर्माण हो रहा है। उसके निर्माता यह समझ रहे हैं कि उनके साहित्य में भविष्य का गौरव निहित है। पर कुछ ही समय के बाद उनका यह साहित्य भी अतीत का स्मारक हो जायगा और आज जो तरुण हैं, वही वृद्ध होकर अतीत के गौरव का स्वप्न देखेंगे। उनके स्थान में तरुणों का फिर दूसरा दल आ जायगा, जो भविष्य का स्वप्न देखेगा। दोनों के ही स्वप्न सुखद होते हैं; क्योंकि दूर के ढोल सुहावने होते हैं।

● **पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी**

॥ अभ्यास प्रश्न ॥

1. निम्नलिखित गद्यांशों के नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

(क) मुझे आज लिखना ही पड़ेगा। अंग्रेजी के प्रसिद्ध निबन्ध लेखक ए0जी0 गार्डिनर का कथन है कि लिखने की एक विशेष मानसिक स्थिति होती है। उस समय मन में कुछ ऐसी उमंग-सी उठती है, हृदय में कुछ ऐसी स्फूर्ति-सी आती है, मस्तिष्क में कुछ ऐसा आवेग-सा उत्पन्न होता है कि लेख लिखना ही पड़ता है। उस समय विषय की चिन्ता नहीं रहती। कोई भी विषय हो, उसमें हम अपने हृदय के आवेग को भर ही देते हैं। हैट टाँगने के लिए कोई भी खूँटी काम दे सकती है। उसी तरह अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिए कोई भी विषय उपयुक्त है। असली वस्तु है हैट, खूँटी नहीं। इसी तरह मन के भाव ही तो यथार्थ वस्तु हैं, विषय नहीं। **(2017AB)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) (a) उपर्युक्त गद्यांश में मनोभावों को क्या बताया गया है?

(b) लिखने की विशेष मानसिक स्थिति कैसी होती है?

(ख) ऐसे निबन्धों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे मन की स्वच्छन्द रचनाएँ हैं। उनमें न कविता की उदात्त कल्पना रहती है, न आख्यायिका-लेखक की सूक्ष्म दृष्टि और न विज्ञों की गम्भीर तर्कपूर्ण विवेचना। उनमें लेखक की सच्ची अनुभूति रहती है। उनमें उसके सच्चे भावों की सच्ची अभिव्यक्ति होती है, उनमें उसका उल्लास रहता है। ये निबन्ध तो उस मानसिक स्थिति में लिखे जाते हैं, जिसमें न ज्ञान की गरिमा रहती है और न कल्पना की महिमा, जिसमें हम संसार को अपनी ही दृष्टि से देखते हैं और अपने ही भाव से ग्रहण करते हैं। तब इसी पद्धति का अनुसरण कर मैं भी क्यों न निबन्ध लिखूँ। पर मुझे तो दो निबन्ध लिखने होंगे। **(2017AD)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) (a) उपर्युक्त गद्यांश में किस प्रकार के निबन्ध में सच्चे भावों की सच्ची अभिव्यक्ति होती है?

अथवा (b) निबन्ध की किन विशेषताओं का उल्लेख हुआ है?

(ग) दूर के ढोल सुहावने होते हैं; क्योंकि उनकी कर्कशता दूर तक नहीं पहुँचती। जब ढोल के पास बैठे हुए लोगों के कान के पर्दे फटते रहते हैं, तब दूर किसी नदी के तट पर, संध्या समय किसी दूसरे के कान में वही शब्द मधुरता का संचार कर देते हैं। ढोल के उन्हीं शब्दों को सुनकर वह अपने हृदय में किसी के विवाहोत्सव का चित्र अंकित कर लेता है। कोलाहल से पूर्ण घर के एक कोने में बैठी हुई किसी लज्जाशीला नव-वधू की कल्पना वह अपने मन में कर लेता है। उस नव-वधू के प्रेम, उल्लास, संकोच, आशंका और विषाद से युक्त हृदय के कम्पन ढोल की कर्कश ध्वनि को मधुर बना देते हैं; क्योंकि उसके साथ आनन्द का कलरव, उत्सव व प्रमोद और प्रेम का संगीत ये तीनों मिले रहते हैं। तभी उसकी कर्कशता समीपस्थ लोगों को भी कटु नहीं प्रतीत होती और दूरस्थ लोगों के लिए तो वह अत्यन्त मधुर बन जाती है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) ढोल की कर्कशता समीपस्थ लोगों को कब कटु प्रतीत नहीं होती है?

(घ) जो तरुण संसार के जीवन-संग्राम से दूर हैं, उन्हें संसार का चित्र बड़ा ही मनमोहक प्रतीत होता है, जो वृद्ध हो गये हैं, जो अपनी बाल्यावस्था और तरुणावस्था से दूर हट आए हैं, उन्हें अपने अतीत काल की स्मृति बड़ी सुखद लगती है। वे अतीत का ही स्वप्न देखते हैं। तरुणों के लिए जैसे भविष्य उज्ज्वल होता है, वैसे ही वृद्धों के लिए अतीत। वर्तमान से दोनों को असन्तोष होता है। तरुण भविष्य को वर्तमान में लाना चाहते हैं और वृद्ध अतीत को खींचकर वर्तमान में देखना चाहते हैं। तरुण क्रान्ति के समर्थक होते हैं और वृद्ध अतीत-गौरव के संरक्षक। इन्हीं दोनों के कारण वर्तमान सदैव क्षुब्ध रहता है और इसी से वर्तमान काल सदैव सुधारों का काल बना रहता है। **(2017AF, 18HAB,20MC, MF)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) (a) तरुण और वृद्ध दोनों क्या चाहते हैं?
(b) तरुण जीवन के संग्राम के अनुभव किस प्रकार से देखना चाहते हैं?
(c) वर्तमान सदैव क्षुब्ध क्यों रहता है?

(ङ) मनुष्य जाति के इतिहास में कोई ऐसा काल ही नहीं हुआ, जब सुधारों की आवश्यकता न हुई हो। तभी तो आज तक कितने ही सुधारक हो गए हैं पर सुधारों का अन्त कब हुआ? भारत के इतिहास में बुद्धदेव, महावीर स्वामी, नागार्जुन, शंकराचार्य, कबीर, नानक, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द और महात्मा गाँधी में ही सुधारकों की गणना समाप्त नहीं होती। सुधारकों का दल नगर-नगर और गाँव-गाँव में होता है। यह सच है कि जीवन में नये-नये क्षेत्र उत्पन्न होते जाते हैं और नये-नये सुधार हो जाते हैं। न दोषों का अन्त है और न सुधारों का। जो कभी सुधार थे, वही आज दोष हो गये हैं और उन सुधारों का फिर नवसुधार किया जाता है। तभी तो यह जीवन प्रगतिशील माना गया है। **(2016 CB, CC)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) जीवन प्रगतिशील क्यों माना गया है?

(च) हिन्दी में प्रगतिशील साहित्य का निर्माण हो रहा है। उसके निर्माता यह समझ रहे हैं कि उनके साहित्य में भविष्य का गौरव निहित है। पर कुछ ही समय के बाद उनका यह साहित्य भी अतीत का स्मारक हो जायगा और आज जो तरुण हैं, वही वृद्ध होकर अतीत के गौरव का स्वप्न देखेंगे। उनके स्थान में तरुणों का फिर दूसरा दल आ जाएगा, जो भविष्य का स्वप्न देखेगा। दोनों के ही स्वप्न सुखद होते हैं; क्योंकि दूर के ढोल सुहावने होते हैं। **(2016 CD, 20MA)**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भविष्य तरुण और वृद्ध दोनों के लिए क्यों सुखद होते हैं?
अथवा **प्रगतिशील साहित्य-निर्माता क्या समझकर साहित्य-निर्माण कर रहे हैं?**
अथवा **'दूर के ढोल सुहावने होते हैं' का भावार्थ लिखिए।**

2. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए। **(2016CA, 17AA, AC, 19AB, AD, AE, AF, AG, 20MD, ME, MF)**

अथवा पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का जीवन-परिचय दीजिए एवं उनकी किसी रचना का नाम लिखिए।

3. बख्शीजी का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

4. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का जीवन-परिचय देते हुए उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।

5. नमिता और अमिता की लेखक से क्या अपेक्षा है?

6. अपेक्षित निबन्ध लिखने में लेखक की क्या कठिनाई थी?

7. लेखक निबन्धशास्त्र के किन आचार्यों की रचनाओं का अवलोकन करता है?
8. एक आदर्श निबन्ध के किन गुणों पर उसकी दृष्टि टिकती है?
9. 'वाक्यों में कुछ अस्पष्टता भी चाहिए' इससे क्या लाभ होता है?
10. अंग्रेजी के निबन्धकार मानटेन निबन्ध की सबसे बड़ी विशेषता क्या मानते हैं?
11. नमिता और अमिता के बताये विषयों को एक ही निबन्ध में समेट देने की बात लेखक के ध्यान में कैसे आयी?
12. निम्नलिखित शब्दों में प्रयुक्त प्रत्यय बताइए—
यथार्थता, कठिनाई, ममत्व, बनावट।
13. निम्नलिखित शब्दों में प्रयुक्त उपसर्ग बताइए—
उपर्युक्त, अभिव्यक्त, अनुसरण, विभूषण, निर्मल।
14. प्रयोग द्वारा निम्नलिखित शब्दों का अर्थ स्पष्ट कीजिए—
आवेग, आदेश, मनन, गरिमा और अभिव्यक्ति।

➥ आन्तरिक मूल्यांकन

(1) पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की रचनाओं की एक सूची तैयार कीजिए।
(2) पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का संक्षिप्त परिचय चार्ट के माध्यम से कीजिए।

शब्दार्थ

ए0 जी0 गार्डिनर = 19वीं शताब्दी में हुए आधुनिक शैली के प्रसिद्ध अंग्रेजी निबन्धकार। **बाणभट्ट** = 7वीं शताब्दी के संस्कृत भाषा के प्रसिद्ध गद्यकार जिनकी 'कादम्बरी' नामक पुस्तक रमणीय वृत्तों, लम्बे वाक्यों और क्लिष्ट शैली के लिए प्रसिद्ध है। **श्रीहर्ष** = 12वीं शती में हुए संस्कृत भाषा के प्रसिद्ध कवि, 'नैषधचरित' नामक महाकाव्य के रचयिता। **सेनापति** = 16वीं शताब्दी के ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि, 'कवित्त रत्नाकर' नामक काव्यग्रन्थ के रचयिता। **मानटेन** = (मानतेन) 16वीं शताब्दी के फ्रेंच भाषा के प्रसिद्ध निबन्धकार। **आख्यायिका** = लम्बी कथा, जिसमें सिलसिलेवार अनेक कहानियाँ गुँथी रहती हैं। **कलरव** =(कल + रव) मधुर ध्वनि। **अतीत** = बीता हुआ समय। **नागार्जुन** = बौद्ध धर्म को दार्शनिक रूप प्रदान करनेवाले कनिष्क के राज्यकाल के एक आचार्य। **उदात्त** = श्रेष्ठ। **विज्ञ** = जानकार। **तरुण** = युवक। **गरिमा** = गौरव। **उल्लास** = हर्ष। **क्षुब्ध** = दुःखी। **दुर्बोध** = कठिन। **कर्कशता** = कठोरता।

●●